"ढोल की पोल"

"जैसी मैं आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआन वे लालो ।" अथवा (परमार्थी रूह) "महन्ती" महन्ती दरअसल चल रही गुरु शिष्य परम्परा को ही कहा जाता है यह प्रथा रूह के कल्याण के लिये परमात्मा द्वारा निर्देषित है । पर इस समय इसका जो स्वरूप देखने में आता है उस पर विचार करना अति आवश्यक है । क्या मौजूदा हालात और समय (घोर कलयुग) में सचमुच रूह कल्याण की ओर अग्रसर है ? शायद नहीं ! बल्कि

निरंतर पतन की ओर ही बढ़ रही है कारण उसका स्वयं अंधा और बहरा होना । अनंत जन्मों के पापों का बोझ उसे अंधा होने के लिये मजबूर कर रहा है । ईश का अंश बारह सूरज की समर्था और मौजूदा अवस्था सिद्ध करती है कि कितनी दीन अवस्था में इस वक्त इस को समय काटना पड़ रहा है । यह खुद आनन्द का स्वरूप आनन्द ही है । तड़प रही है अपनी उस अवस्था को प्राप्त करने के लिये । भटक रही है सुख की तलाश में । इसी कारण हर जगह यह इस सुख (आनंद) को ही सूंघती फिरती है पर मिलता इसको धोखा ही है । जहां सुख है सच में, वहां यह जाना ही पसन्द नहीं करती । कारण इस पर अज्ञानता (अविद्या) का पर्दा पड़ा हुआ है । कोई इसको सच्चा मार्ग नहीं बताता सभी इसे लूटने-घसीटने में ही लगे हुऐ हैं । इन्हीं में एक नाम महंती का भी शामिल हो गया है । इसका असली भेद क्या है सो बताते हैं । कुछ विशेष रूहें जब तप करती हैं पर यह तप उन का काम पर आधारित होता है और उन्हें इस तप के बदले में सिद्धियों (एक या अधिक) की प्राप्ति होती है । सिद्धियां सभी शब्द का ही विकृत स्वरूप अर्थात मैल ही है । यही विशेष रूहें इस गुरू-शिष्य परम्परा में बड़े धड़ल्ले से प्रवेश करती हैं और सिद्धियां इनके पीछे-2 इन्हीं के अधीन इन्हीं की कामनाओं को मुख रख कर कार्यों को सिद्ध करती हैं । शिष्यगण जो पहले से ही इन के चुंगल में फंस चुके

हैं (झूठे सुख को सुख कहे, मानत है मन मोद । जगत चबेना काल का कुछ मुख में कुछ गोद ।) इस का भरपूर साथ देतें हैं । और महंती चल पड़ती है । कारण सभी रूहें सुख की तलाश में हैं । इसमें जब तक महंत जी को आप प्रसन्न रखेंगे तभी तक आप को इन "तीन लोकों" के सुखों में से कुछ न कुछ अंश प्राप्त होता रहेगा । अगर महंत जी के माथे पर लकीर पड़ गई तो समझ लो कि आप की कुलों, मित्रों तथा संबंधियों सहित सभी के सुखों में भी दरार पड़ गई । विचार करो कि यह लकीर क्यों नही पड़ेगी ? कभी न कभी अवश्य ही पड़ेगी । ईश ने इन्सान को बनाया पर अभी तक उसे प्रसन्न अथवा संतुष्ट नहीं कर सका । फिर आप किस सिद्धि के बल पर इन्हें संतुष्ट कर लेंगे ? लेकिन फिर भी आप लगे ही हुऐ हैं यही आप की अज्ञानता है । आत्मा अपनी ताकत को खो चुकी फिर सिद्धि कितनी ही छोटी क्यों न हो यह उसके चुंगल में फंस ही जायेगी फिर निकलने की आप कल्पना मत करियेगा । महंतो की भेंट-पूजा, मत्था-टिकाई, आदर-सत्कार में ही आप फिर अपना सर्वस्व होम करने का संकल्प करियेगा कहीं आगे-पीछे चूं-चपड़ करी तो नतीजा ऊपर बता ही आये हैं । और जो कार्य आप के सिद्ध किये जायेंगे उनकी कीमत इनके तप में से ली जाती है बताओ ये क्यों फिर अपने चुंगल से आप को निकलने देंगे फिर आप कोई ईश तो मांगते नहीं अपनी

ही करतूतें जो आप भोगना नहीं चाहते उसी के लिये आप इन गद्दियों-महन्तों डेरों आदि के चक्कर लगाते हैं पहला चक्कर ही केवल आप को लगाना है शेष सिद्धियां अपने आप लगवाई जायेंगी यहां तक कि आप की उम्र जो यदि कई युगों की भी अगर हो तो आप को पता ही नहीं चलेगा कि कब खत्म हो गई । इसी तरह इनकी भी (महंतो की) पीढ़ियां चलती हैं । जो तप अथवा गिफ्ट पर आधारित होती हैं । एक के आँख मूंदने से पहले दूसरे के हाथ में ये जादू की छड़ी पकड़ा दी जाती है । आप की पीढ़ी दर पीढ़ी यही अंधे की लाठी की तरह से एक बेहतरीन गिफ्ट अपने वारिसों को देते चले जाते हैं । बताईये अब कैसे इस घोर भयानक फंदे में से निकला जाये ? यानी कर्ज इतना चढ़ चुका है कि कोई कल्पना भी नहीं की जा सकती निकलने की । दूसरा कारण है कुछ विशेष रूहें जो इन के विशेष शिष्य कहलाती हैं उनके बाधित कर्म इन महंतो के शरीर पर नाम के तौर पर भुगताये जाते हैं कर्म का बोझ तो शब्द नें ही उठाना है लेकिन लड़ियां इनके चेहरों पर सजा दी जाती हैं यही कारण है कि शब्द का विकृत रूप (सिद्धि) इन्हीं के अधीन ही कार्य करती हैं । चाहे वो क्रिया परमात्मा के मुँह को काला ही क्यों न करने वाली सिद्ध हो । पर परमात्मा सिर्फ खामोशी से केवल देखता है । पापी अथवा सज्जन दोनों में ही केवल ईश ही है ईश केवल कर्म का ही

अनुसरण करता है। यही उसका खेल अथवा तमाशा है और परमार्थी रूहें इस चुंगल में फंस कर के शेष जीवन रास्ता तो क्या प्राप्त करना है केवल तड़पती हुई ही अपनी हस्ती (इन्सानी जन्म) गंवाती चली जाती हैं । कर्म भुगताते हैं सो वो भी संक्षिप्त रूप से बताते हैं सरकारी रास्ते से मांस के टुकड़ों का निकलना, पेशाब के रास्ते खून अथवा कुछ सख्त पदार्थों का आना, किडनी, ब्लैडर आदि अंदरूनी मार्गों में पत्थरी आदि सख्त पदार्थों से कार्य अथवा मार्गों का अवरूध अथवा दर्द होना कमर में एक ऐसा दर्द होना जैसे किडनी निकाल कर टांके लगाये गये हों, कंधे का कटे होना जैसा दर्द, दिमाग अथवा गर्दन की नसों का खिंचना तथा दर्द रहना, घुटने आदि जोड़ों में दर्द रहना इत्यादि ऐसे ही अनेक ढंगों से ये कर्मो का भुगतान किया जाता है । जिस पर भुगताये जाते हैं उसे केवल इसका एहसास मात्र होता है जैसे कपड़े का स्पर्श इत्यादि । एक जन्म का घोर नर्क रूपी कष्ट केवल एक आध दिन अथवा कुछ घड़ियों में ही केवल एहसास करवा कर भुगतवा दिया जाता है । कई बार तो जिस पर भुगतवाया जाता है उसे इसकी खबर तक भी नहीं लगती और लड़ियां बंधी होने के कारण होमै उसे बस में कर लेती है और इसी मद में वह (महंत) मर्यादा तक को भूल जाता है यानी कि वह एक इंसान है और उसे समाज में कैसे विचरना चाहिये उसे इसका एहसास ही नहीं रहता और

वह इन सिद्धियों का निरंतर दुरूपयोग करता चला जाता है । इन क्रियाओं से कितनी परमार्थी रूहों का मार्ग अच्युत होने का पतन होगा इससे उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं उसे तो केवल अपने लोभ-स्वार्थ आदि निजी मनोरथों के पूर्ण होने तक का ही सरोकार है परमात्मा का चेहरा कितने सुन्दर-2 रंगों से सुशोभित हो रहा है इसका उसे भान तक नहीं रहता । ईश भी केवल कर्म का ही अनुसरण करता हुआ खामोश तमाशबीन के रूप में ही दृश्टिगोचर होता है । अब सवाल है कि फिर भी रूहानियत अथवा गद्दी कार्य उसी के जरिये क्यों करती है ? सो वह भी बताते हैं आग तभी बुझती है जब उसमें ईंधन न डाला जाये फिर तो एक समय अवश्य आयेगा ही जब महंत का पतन हो जायेगा क्योंकि शाप अथवा वरदान (सदुपयोग अथवा दुरूपयोग) दोनों में ही तप कटता ही है । लेकिन देखने में आता है कि साथ ही साथ कर्मो आदि के भुगताने का (ईंधन) भी कम थोड़ा या अधिक साथ के साथ चलता ही रहता है जिससे ये आग कभी ठंडी होती ही नही । अर्थात गद्दी उन्हीं महान महंतो के जरिये ही सिद्धि के रूप में कार्य करती ही रहती है । इसी कारण इनके हौंसले उतने ही बढ़ जाते हैं जिन की आप न तो कल्पना ही कर सकते हैं और न ही किन्हीं भी लफजों में इन्हें यहां पर ब्यान ही किया जा सकता है शर्म आती है इन घटनाओं को याद करके कि क्या इसी को इन्सान

कहा जाता है तो फिर पशु की परिभाषा नई ही देनी पड़ेगी । सभी पाप इस पाप के आगे कुछ भी अर्थ ही नहीं रखते कि एक परमार्थी को उसके मार्ग से अच्युत होने के लिये मजबूर कर दिया जाये । सभी पापों का भुगतान है और बहुत थोड़ा लेकिन जो आत्मा इस रास्ते से विमुख होने के लिये मजबूर कर दी जाती है वो इस मनुष्य जन्म को गंवा कर फिर कब इसे दुबारा प्राप्त कर पायेगी इसकी अवधि अच्छे-2 ऋषि भी ब्यान न कर पाये । ये भुगतान (हानि) कौन कैसे और किस रूप में उसे चुका पायेगा इसकी तो कोई कल्पना ही नहीं है । किसी भी जून में यदि कोई भी नर मादा के मिलन में रूकावट डालता है तो घोर नरक सहने पर भी इसका भुगतान असंभव ही है। फिर आत्मा रूपी स्त्री का प्रभु रूपी पति से मिलने के अवसर को घौर पापी कैसे अपनी वासनाओं की पूर्ति के लिये ही केवल खेल-2 में नष्ट कर देते हैं । पांडू ने भी अन्जाने में यही गलती की थी जिसका बदला उसी जन्म में शाप के रूप में कितने भयानक रूप में भुगता ! कितना कठिन तप करने के बाद भी वह सुख सुपने में भी नहीं जान सका और इसी कारण उसे प्राण भी त्यागने पड़े तथा उसी के वंशजों को कितने घोर अभाव और तिरस्कार भरा जीवन जीने के लिये मजबूर होना पड़ा पूरी महाभारत इसकी साक्षी है । परमार्थी के त्याग, ईमानदारी, वफा, सच्चाई इत्यादि का कैसे मुँह काला किया

जाता है और बेईमान परमात्मा का द्रोही साबित किया जाता है ये केवल एक अनुभवी ही महसूस कर सकता है । अवस्था का ब्यान तो वो भी नहीं कर सकता । और आप जानकर सुप्रसन्न होगें कि यह केवल सिद्धि के द्वारा ही संभव होता है । मंहतों में अपनी कोई भी ताकत नहीं होती जरा सी तेज आवाज में तो उनकी पूँछ टांगों में धँस जाती है । और उन्हें बचाव का भी कोई मार्ग नहीं सूझता । जो दिल की बात बता दे, कुछ फैंसले (चाहे कितने भी कमीने पाप किये हों) हमारे हक में करवा दे, कुछ साधन-सुख सामग्री आदि का प्रबन्ध करवा दे बस-बस ये तो कई ईश्वरों के लक्षण हो गये । हम तो इन में से केवल एक आध की पूर्ति में ही पूरे लेट कर दण्डवत करते हैं और ईश्वर को पिता होने की पदवी प्रदान कर पीढ़ी दर पीढ़ी इस भयानक दलदल में गोते लगाते चले जाते हैं । कभी-कभी किसी एक आध केस में सिद्धि इन पर पर्दा डालने के लिये कुछ विलक्षण क्रियाऐं भी करती रहती हैं जिससे भ्रम लगातार बना रहे और मंहती धड़ल्ले से चले । सभी पहलुओं का उल्लेख असंभव ही है थोड़े में ज्यादा जान लेना । अगर शक हो तो किसी मंहती क्रिया में जरा नजदीक हो कर के देखना । यकीन जान लो फिर ठीक या गलत इस फैसले के लिये आप के पास जीवन शेष न बचेगा । यानी कब उम्र खत्म हो गयी आप जान भी न पाओगे यही इन सिद्धियों का चमत्कार है ।

इनका कार्य करने का दायरा ये तीनों मुल्क ही हैं केवल । ये परमार्थी को हमेशा ध्यान में रखना चाहिये । और मुक्ति इन सब से दूर बहुत दूर चौथे गुण में है । जो इन्हें ठोकर मारता है वही केवल इसे जान पाता है । "तीन लोक को सभ कोई ध्यावै । चौथे देव का मर्म ना पावे ।" बिल्कुल ठीक यही क्रिया जड़ पूजा में भी चलती है । यानी महंतों में सिद्धि महंत के जरिये उसके अधीन हो कर के कार्य करती है तो जड़ तो जड़ ही है उससे तो किसी भी क्रिया की कल्पना ही मूर्खता है । इसमें सिद्धि गुप्त रूप से अपने ऊपर की दैवी ताकतों के अधीन हो उन के दायरे में रहकर के कार्य करती है । शेष सब कुछ वैसे ही है । जो इनकी पूजा करता है वही महंत के दर्जे में रखा जाता है शेष सब निकृष्ट क्रियाऐं वैसी ही जैसी ऊपर मंहती में बता आये हैं । जड़ तथा (जड़-चेतन) मंहती इन दोनों से बचना इस घोर कलयुग में परमार्थ का आधार है । क्योंकि दोनों के पीछे जो रुहानी ताकत कार्य कर रही है उसका कार्य केवल रूह को रोकना अथवा असंतुष्ट करना ही है जिससे वह न्याय के लिये संकल्प करे फिर यही होगा "हउ विचि दिता हउ विचि लइआ ।" यानी दोनों को आना ही पड़ेगा । यही भेद है इस खेल का । जड़ स्थानों का विश्लेषण किया जाये तो काफी तो कबरें ही निकलेंगी जिन्हें संसार पूज रहा है । इस लोक का नाम मृत लोक रखा गया है यानी हर तरफ

मौत ही मौत नाच रही है "जो उपजै सो बिनस है परयो आज के काल ।" और इसमें भी हम नें पूजा के लिये कुछ विशेष (कब्रिस्तान) बना लिये हैं । हमारी विवेकता केवल यहीं तक ही है । इन कब्रों को दूध से धो कर माल-सुगन्ध पकवान आदि से सत्कार कर मत्था टेकते हैं और मन्नतें मांगते हैं तो क्या मुर्दे उठ कर के कार्यो को सिद्ध कर देते हैं ? नहीं ! दैवी ताकतों का जमघट (प्रेत, राक्षस, यक्ष, किंनर, गर्दव, दैव) ये सूक्षम जूनें इन स्थानों पर आपकी पूजा को स्वीकार करती हैं और आपकी बाधाओं को आप के ही कर्मानुसार दूर करके अपना मुख उजला करती हैं फिर बताईये कैसे और क्यों कर ये अपने फंदे से आपको बाहर निकलने देंगी ! इन्हें कभी भी इष्ट नहीं है कि देव का पशु उनसे ऊपर के लोकों में रहे । यानि रूह को यहीं रोकने का हर सम्भव प्रयत्न किया जायेगा चाहे वह प्रेत बाधा के रूप में ही क्यों न हो ! यदि कहीं किन्हीं को विशेष रूप से देव लोक आदि स्थानों की प्राप्ति करवा भी दी जाती है तो वहां भी वह देव का उपभोक्ता बन कर के ही रहता है यानी वहां भी जी हजूरी रूपी गंद ही खाना पड़ेगा कोई इन्द्र की कुर्सी पर तो बैठा नहीं दिया जायेगा । फिर सदा नीचे गिरने की आशंका । क्योंकि रात-दिन आदि समय का तो विधान नहीं, केवल पुण्य पर ही आधारित ये जूनें अब गिरी अब गिरी बस इसी में सूखती हैं और लगातार ईर्ष्या की अग्न में

जलना पड़ता है, कारण श्रेष्ठों को जो भोग्य पदार्थ उपलब्ध रहे आप उन्हें देख कर केवल जल सकते हैं प्राप्त नहीं कर सकते निश्चित रूप से । कब्रिस्तानों की पूजा हम इस तरह करते हैं जैसे ईश्वर जी वहां बैठे हमारे आने का इन्तजार कर रहे हैं बस भेंट पूजा चढ़ते ही कब्र में से निकल कर हमें गले से लगा लेंगे । ये पशु वृति है अभी हमको केवल इंसान बनना है । खाना, मैथुन, सोना, डर यही वृति हमारी इस वक्त बनी हुई है । पशु को तो बुद्धि नहीं, हमें प्राप्त है तो हम इसका उपयोग कहाँ कर रहे हैं ? इन्हीं चारों को बढ़ाने अथवा कायम रखने के लिये ही केवल (खाना, मैथुन, सोना, डर) हम बुद्धि का प्रयोग कर रहे हैं यही वृति पशु की है (बिना बुद्धि का) यानी हम रोज-ब-रोज पशु ही बनते जा रहे हैं पशुओं में श्रेष्ठ पशु केवल ! सौ वर्ष चाहिये केवल पशु से इन्सान बनने के लिये फिर सौ वर्ष लगेंगे एक सच्चा हिन्दू अथवा मुसलमान बनने के लिये । फिर सौ बरस और चाहिये एक सिख बनने के लिये । यही दाड़ी ही सिख है केवल यही सिद्ध करने में लगे हैं । सिख कहलाने का अधिकार केवल उसे ही है "नगन (अपना कहने को कुछ भी न हो) फिरत रंग एक कै । ओह शोभा पाए ।" यही सिख केवल अपनी शक्ल देख पाता है ! इतिहास में एक जिक्र आता है राम जी के समय का "कलंजर का महंत" सो विचार करने योग्य है परमार्थी के लिये । एक बार सभा समाप्ति

को थी, राम जी ने लक्ष्मण जी से कहा कि देखो बाहर कोई फरियादी तो नहीं है ? राजधर्म है कि फरियादी के रहते सभा समाप्त नहीं हो सकती । लक्ष्मण जी ने बाहर जा कर देखा और बताया कि कोई फरियादी नहीं है । अब प्रभू तो सब जानते ही हैं कहने लगे फिर जाओ और इस बार आवाज दे कर के पूछना ! जब लक्ष्मण जी नें ऐसा किया और आवाज दे कर के पूछा तो एक काले रंग का कुत्ता जो कोने पर बैठा था कहने लगा भाई मैं हूँ मुझे न्याय चाहिये । उसके सिर में जख्म था ताजा और खून निकल रहा था । लक्ष्मण जी नें घाव धो करके पट्टी करी और सभा में फरियादी कूकर को लेकर के पहुँचे । राम जी ने आसन दे कर के फरियादी को बैठाया और फरियाद पूछी । कूकर ने कहा कि आप के राज में एक ब्राह्मण भिक्षुक सन्यासी ने अकारण ही मुझे डण्डे से मार कर जख्मी कर दिया है मेरा कुछ भी दोष नहीं था इसे सजा मिलनी चाहिये । न्याय करना ही राजा का धर्म है प्रजा न्याय से ही फलती है । काश आज के राजा (नेता) अपने इस कर्तव्य को जान पाते तो क्यों धन-साधन आदि की लोलुपता में कम से कम अपनी आत्मा का नाश तो न करते । राम जी ने दूत भेजे वे खोज कर उस युवा ब्राह्मण सन्यासी को दरबार में ले कर पहुँचे राम जी ने ब्राह्मण देवता को दण्डवत की पूजा कर आसन दिया और फरियादी का सवाल दोहराया । ब्राह्मण देवता

ने कहा मैं भूख से व्याकुल भिक्षा से संतुष्ट न होने के कारण मार्ग से जा रहा था रास्ते में मेरे आगे ये कूकर जा रहा था मैंने इसे हटने के लिये कहा इसके न हटने पर क्रोध में आ कर मैंने इसे डण्डे से मारा इसका कोई भी दोष नहीं था । जो अपनी वृति से असंतुष्ट रहता है उसमें काम अथवा क्रोध सूक्ष्म रूप से मन, बुद्धि तथा इन्द्रियों में समाया रहता है । क्रोध बुद्धि की विवेकता को हर लेता है और आत्मा जो भी फैसला कर क्रिया अपनाती है इसमें केवल उसका अपना ही नाश होता है । नतीजा प्रत्यक्ष ही है । अब राम जी दुविधा में आये ब्राह्मण देवता के लिये उस समय दण्ड का कोई विद्यान ही नहीं था वे तो केवल कुल गुरू (ब्राह्मण) को वरदान देना जानते थे ! सभा के नवरत्नों से राय पूछी गई, सब ने अलग-ढंग की सजा बताई । अब जब इन्हें दण्ड देना ही मंजूर नहीं तो किस की मानते ? फिर फरियादी को संतुष्ट करना राजा का धर्म है । अन्याय की अवस्था में 50% तो पाप का बोझ सभापति को ही उठाना पड़ता है शेष सदस्यों को यदि वे भी अन्याय को जानते हुए भी खामोश रहते हैं तो । काश इस विधान को आज का उत्तम कहलाने वाला मानव श्रेष्ठ समझ पाता तो आज भी राम राज्य ही होता । न कि महीरावण (मन होमैं) का राज ! इसीलिये कहा है कि या सभा के चक्करों में पड़ो ही मत यदि पड़ो तो फिर अन्याय को देख कर अंधे (खामोश) मत बने

रहो । लेने के देने पड़ेंगे किसी भी सूरत में बच नहीं पाओगे । पाप कोई करेगा और चुप रह कर उसके पाप में हिस्सा बटवाओगे ये आप की केवल सिआणत ही कहलायेगी । खून के आंसू रोना पड़ेगा । अब राम जी ने फरियादी (कूकर) से ही सजा बताने की याचना की ! कुछ विचार करके फरियादी ने कहा कि सब से बेहतर इसकी सजा तो यही है कि इसे "कलंजर का महंत" नियुक्त कर दिया जाये । यह सजा सुनकर सभी सभासद ब्राह्मण सहित खिल-खिलाकर हंसने लगे कि ये सजा है या "वरदान ।" खैर राम जी केवल मुस्करा दिये उन की इच्छा पूर्ण हुई ब्राह्मण देवता को तो वे वरदान देना जानते थे न कि दण्ड । उसी वक्त हुकम लिखा गया शाही मोहर लगाई गई हाथी सुसज्जित किया गया और उस पर नये वस्त्र पहना कर के ब्राह्मण देवता जी को बैठाया गया और बैंड बाजों के साथ कलंजर भेज दिया गया महंत बना कर के । ब्राह्मण देवता तो फूले नहीं समाते थे सबके चरणों में गिर-2 पड़ते थे । सभा सद सभी कूकर की बुद्धि पर हंस रहे थे कि है तो ये कूकर ही बुद्धि कहां से लाये ये सजा सुनाई है या वरदान । राजधर्म इससे भी दागी होता है कि सभासद संतुष्ट नहीं हैं । क्योंकि न्याय में सजा के बदले वरदान दे दिया गया है । अब राम जी तो जानते हैं परन्तु खामोश हैं और समाधान न्याय का फरियादी (कूकर) से ही करवाते हैं । फरियादी जवाब देता है कि

पिछले जन्म में मैं मनुष्य और कलंजर का महंत था । दिन रात भजन करता था, अपनी ईमानदारी की खाता था, इन्द्रियों को सयंम में रखता था फिर भी इस महंती के सभी कार्यों को बड़ी चतुराई से निभाता था । नतीजा आप देख ही रहे हैं कूकर की योनी भोगनी पड़ रही है (अभाव और तिरस्कार से भरी) यानी मैं अपने को इतनी सावधानी वरतने के बाद भी महंती नाम के विश से बचा नहीं सका फिर यह बेचारा तो इन्द्रियों के अधीन अपनी वृति से ही असंतुष्ट कामी अथवा क्रोधी युवा ब्राह्मण है ये कैसे और क्यों कर इस विश (महंती के) से बच सकेगा । यानी यह निश्चित ही है कि यह अपराधी ब्राह्मण अनन्त काल के लिये घोर नरकों तथा निकृष्ट जूनों में दुख सहने के लिये धकेल दिया गया है । प्रकट रूप में तो महंती एक वरदान ही है पर असल में यह विश से भी नीचे की श्रेणी है विश तो केवल मारता ही है और यह महंती केवल तिल-तिल कर जीने के लिये मजबूर करती है सिर्फ मारती ही नही है । इससे प्राप्त दुखों को ब्यान नहीं किया जा सकता केवल अनुभव करने वाला ही महसूस कर सकता है । अतः अगर आप को किसी से बदला लेना हो तो केवल उसे महंती का ही वरदान दे दें शेष सब अपने आप सिद्ध हो जायेगा । बाहर से इसकी इतनी चमक है कि महंत बड़ा इतरा कर चलता है कारण सारा जगत उसके आगे सिर नवाता (झुकाता) है । नतीजा

आप प्रत्यक्ष देख ही चुके हैं । अतः कभी भी किसी सूरत में भी इसे स्वीकार करना ही नहीं चाहिये । गले पड़ ही जाये तो या सन्यासी हो अण्डरग्राउण्ड हो जायें अथवा आत्म हत्या तो यह स्वयं ही है निश्चित रूप से !

कभी भी महंत को भेंट-पूजा, मान-सम्मान, मत्था-टिकाई किसी भी सूरत में स्वीकार न करनी चाहिये । अपनी ईमानदारी की ही केवल जरूरत मंदो सहित कमाई पर निर्भर रहना ही कल्याणकारी है । निरंतर एक "सतनाम" से ही अपनी वृति को जोड़े रखना इस विश से बचने का केवल उपाय है । जो इस मर्यादा से बाहर हैं वे तो खुद डूबे हुए ही हैं होमै में भाई आप को कहां से पार लगा देंगे । आप जहां कहीं भी डेरों आदि स्थानों पर जाते हैं इस कसौटी को छुपाकर के ले जायें और परख करके देख लें हाथों हाथ फैसला हो जायेगा । मनुष्य जून यदि इन्हीं महंतों (विश) की भेंट चढ़ गई तो फिर पता नहीं कब मौका मिलेगा यहां तक इस जून में भी आने का । "लख चउरासीह जोन सवाई माणस कउ प्रभ दी वडिआई । इस पउड़ी ते जो नर चूकै सो आई जाई दुख पाईदा ।" विचार करने योग्य है ।

गुरू हरगोबिंद जी के समय भी एक मिसाल मिलती है महंत के अजगर जूनी में आने की । जब जून छूटी तो असंख्य कीड़े उसमें से निकल-2 कर उसे खाने लगे तब गुरू साहिब जी

ने वचन किये कि झूठी महंती का यही हाल होता है । यह अजगर पिछले जन्म में महंत था और शिष्य अपनी खोटी कमाई में से जो पदार्थ भेंट देते थे यह उन्हीं के भोगों में मस्त रहता था अपनी तथा शिष्यों के कल्याण के लिये भजन बन्दगी आदि नहीं करता और न ही उन्हें सुधरने अथवा उनके कल्याण के लिये कोई शुद्ध मार्ग बताता था । अब वही शिष्य कीड़ों के रूप में इससे अपना हिसाब ले रहे हैं । इनको छोड़ थोड़ी देना हैं यानी जहां गुरु (महंत) वहीं शिष्य अथवा जहां शिष्य वहीं गुरु (महंत) यही इन जड़ पदार्थो (शरीर सहित) की असक्ती का नतीजा निश्चित ही है । महंती एक जलती हुई चिता के समान ही है अगर जरा भी सावधानी में चूक की फिर सावधान होने के लिये बचोगे ही नहीं । अर्थात चिता का ही रूप हो जाओगे । इस आग के गोले को (महंती) कोई विरला ही केवल परमात्मा की कृपा से हज्म कर पाया है । जीव में तो इसे देखने तक की भी समर्था नहीं है । गुरु घर के इतिहास पर नजर मारें तो वहां भी यही दुर्गन्ध से भरे टोकरे ही दीखते हैं । इस (महंती) लोलुपता में जीव कितना गिर जाता है उस के जानने के लिये तो पूरे इतिहास को विचार करने की आवश्यकता है । गुरु नानक जी के महान सुपुत्रों नें भाई लहणा जी को नौकर ही जाना कोई आदर नहीं दिया । भाई लहणा जी, (गुरु अंगद देव जी) के सुपुत्र दातू जी ने गुरु अमर दास जी को

पीठ में लात मार कर गद्दी पर से गिरा दिया । गुरु अमरदास जी के सुपुत्रों ने गुरु राम दास जी की कोई कदर नहीं की । सभी गुरुओं को इस पदवी को प्राप्त करने के बाद रहने के स्थान का त्याग करना पड़ा । ईर्ष्या इतनी प्रबल होती थी कि इन्सान-इन्सान के खून का प्यासा वो भी घर-सम्बन्धी न कि बाहर के । अब बीबी भानी जी ने गुरु पिता जी खुश होने पर यह वरदान मांगा कि ये गद्दी अब मेरे घर में रहे । वरदान मिल गया साथ ही मुफ्त उपहार भी कि बीबी ये तो सेवा की दात थी तूने चलते पानी को बन्ध लगाया है अब रहेगी तो तेरे ही घर में लेकिन दुख-कलेश सदा बना रहेगा यानी एक ही परिवार के सदस्य अपने ही खून के प्यासे बने रहेगें । अब विचार करें तो वरदान मांगा गया कि "कंजरखाना" अब इसी घर में रहे । देखा जाये तो जहां भाई-2 को कत्ल करने के लिये निरंतर प्रयत्नशील है वहां यह "कंजरखाना" लफज भी सकुचा जाता है अर्थात छोटा पड़ जाता है । अब इन्हीं महान बीबी जी के महान बड़े सुपुत्र जिन में सिद्धियां भरपूर कार्य करती थीं, छोटे भाई गुरु अर्जुन देव जी को दात मिलने पर उनके कत्ल का इन्तजाम करते रहे । फिर जब माता गंगा जी गर्भवती हुई तो गर्भ गिराने के "रोज" उपाय करने लगा मजबूर हो गुरु अर्जुन देव जी माता गंगा जी को ले कर अमृतसर से दूर बडाली गांव चले गये । वहां जब बालक (गुरु हरगोबिंद

जी) दो वर्ष का हो गया तब वापस अपने घर आये यहां फिर अब बालक को मारने के रोज नये-2 उपाय होने लगे आखिर रसोइये से मिल हलाहल विष बालक को खिला दिया गया । प्रभू इच्छा से ही केवल बालक रक्षित हुआ । साथ ही लगातार गद्दी बिछा कर बैठता रहा और भेंट पूजा आदि भी करवाता रहा, जिसे हुकम था वे केवल खामोश सतनाम से जुड़े रहे । जब कुछ विशेष रूहों नें उद्यम करके गुरु को स्थापित किया फिर मुसलिम हकूमत (जुल्म की) का मुखबिर बना उन से मेल कर भाई-भतीजे दोनों के कत्ल का निरंतर अभ्यास जारी रखा, ये दूसरी बात है कि हर बार ये परमात्मा द्वारा रक्षित ही रहे । साथ ही गद्दी भी चलाता ही रहा जीते जी और उसके बाद उसका पुत्र मिहरवान भी गद्दी चलाता रहा । इसने तो वाणी तक रच कर के नानक की छाप लगा कर दुनिया को बहुत बड़े भ्रम जाल में ही फंसा दिया । जिस कारण गुरु अर्जुन देव जी को अकाल पुरख परमात्मा के हुकम में बाणी की छंटाई कर नानक नाम की छाप लगाई और सभी बाणियों को गिनती में लिखा कर (महला 1,2,3,4,5) कलम बद्ध किया, नानक जी ने कहीं भी वाणी में अपना नाम दर्ज नहीं किया था । यह तो मजबूरी वाणी की सुरक्षा के हेतू नियम बद्ध किया गया, वे तो स्वंय को "जन नानक हाट विहाजै, हरि गुलम गुलामी ।" "दुई कर जोड़ नानक दान मांगै तेरे दासनि दास दसाइण ।" "कह नानक हम

नीच करमा सरनि परे की राखहु सरमा ।" इन्हीं भावों में व्यक्त करते इस मृत लोक से अपनी लीला (कार्य समाप्त कर) समेट गये । यदि गुरु अर्जुन देव जी ये उपराला धुर निर्देश में न करते तो आज सृष्टि को यह वाणी रूपी पवित्र गुरु कहां उपलब्ध हो सकता था । अब मिहरवान के बाद उसका पुत्र हरिमीणा गद्दी चलाता रहा । विचार करने योग्य तो यह है कि क्या मनुष्य केवल गद्दी बिछा कर बैठने तथा बाह्य आडंबर रचने से ही दूसरों को मूर्ख बना उन से भेंट पूजा स्वीकार कर सकता है ? क्या केवल इसी तरह से वाणी भी रची जा सकती है ? तो जवाब है नहीं ! फिर क्या भेद है ? सो बताते हैं बिना रूहानी ताकतों (सिद्धियों) की मदद के कुछ भी सम्भव नहीं है आप किसी एक को भी मूर्ख नहीं बना सकते, यहाँ लाखों की भीड़ मूर्ख बनी दीखती है । ये सब चमत्कार इन्हीं रूहानी ताकतों का है जीव तो अंधा-बहरा ही है । और इसकी इसी अपंगता का ये रूहानी (स्वंय को परमात्मा अथवा धुर की) ताकतें भरपूर फायदा उठाती हैं । आत्मा तो पहले ही बता आये हैं भटक रही है सुख की तलाश में । इसी लोभ में वे इसको फंसा लेते हैं कुछ संसारी साधन-भोग इत्यादि दे कर के । कहने का भाव असली और नकली महंती में पहचान कोई नहीं कर सकता । (असली महंत एक जन्म का घोर नरक केवल कुछ घड़ियाँ शरीर तपा कर शब्द की ताकत से भुगता देता है) । केवल

विवेकता रूह की अपनी तथा परमात्मा से मिली कृपा ही मार्ग दर्शन कर सकती है मुक्ति का । महंत का सवाल क्यों आये हो यहाँ ? परमात्मा से मिलने, मार्ग दर्शन हेतू । तो केवल यही जवाब कि परमात्मा तुम्हारे अन्दर है । मिलने वाले तुम शरीर नहीं आत्मा हो । वो भी शरीर के अन्दर ही है । रोम-2 में बसे हैं दोनों अब सोचो मिलने के लिये किसी दलाल की जरूरत है और वो भी मिलन किसी डेरे, मन्दिर, गुरूद्वारे अथवा किसी घाट विशेष पर करवायेगा ? वाह री सिआणत खुद ही मौत का सामान एकत्र किये जा रही है । "सभ किछ घरि महि बाहर नाही बाहर टोले सो भरमि भुलाही ।" यानी जब तक आत्मा और ईश के बीच तीसरा महान कोई भी किसी भी रूप में मौजूद है यह मेल नहीं होगा । और जब भी होगा केवल दो (आत्मा-ईश) का ही इसी घाट अर्थात शरीर के अन्दर ही होगा । "प्रेम गली अति सांकरी ता में दो न समाहि ।" जो सारी उम्र डेरों में गद्दियाँ आदि झाड़ते ही गंवा देते हैं उन्हीं से पूछो क्या कभी गद्दी के नीचे सूक्षम छिद्र देखा है जिसमें से गुजर कर आत्मा अपने घर जायेगी और आप मौके की तलाश में हैं कि कब महंत जी आगे पीछे हों और हम इस छिद्र में से निकल कर अपने घर पहुंच जायेंगे । यानी यह सब केवल समय नष्ट करने की मास्टर घसीटा राम जी की चालें हैं । अब जहां असली महंत को आप के वहां आने पर भी एतराज है क्योंकि

उसे "एक" से जुड़े रहना ही इष्ट है । भेंट-पूजा, मान-सत्कार, मत्था टिकाई आदि से दूर-2 तक का भी कोई सम्बन्ध ही नहीं है वहीं नकली महंत आप को अलग-2 बुलायेगा और इससे पूरी क्रिया उल्ट ही करेगा । कई चक्करों में तो आप अन्दर तक "विशेष दायरे" में पहुँच पायेगें । फिर भेंट पूजा आप के सामाजिक ओहदों पर भी ध्यान दे कर आप की श्रेणी निर्धारित की जायेगी । मत्था तो लेट कर के ही उत्तम माना अथवा स्वीकार किया जायेगा तथा बात-2 में आप को हजूर, पातशाह, सांई जी, वगैरह-2 आदि विशेषणों से अपनी बोली को श्रृंगारित करना पड़ेगा और इन की पसन्दगी अपनी निजी डायरी में नोट करके रखनी पड़ेगी तथा ये भी लिख कर रखना पड़ेगा कि किन-2 से इनको एलर्जी है । भाई साहब यह सब आपके भले के लिये ही मेहनत कर रहे हैं । कारण कि यदि इनके माथे पर लकीर प्रकट हो गई तो तीनों मुल्कों में आप की रक्षा करने वाला ढूंढे भी नहीं मिलेगा ! नाश केवल आप का ही नहीं आपकी कुलों का मित्र-सम्बन्धों सहित होना निश्चित ही समझियेगा । वैसे कई महंत तो ऊँची रूहानी ताकतों द्वारा रक्षित होने के कारण (खास तौर पर जो कर्म की गति से बाहर की श्रेणी के हैं ।) अच्छे-2 परमात्मा खामोश इस सुन्दर तमाशे को देखेंगे । इसीलिये आपको इस मार्ग पर चलने से पहले एक निजी डायरी (महंतो की) कुछ मेहनत

(रिश्वत, सिफारिश आदि खर्च) कर के बनाकर ही रखनी चाहिये क्योंकि आगे पीढ़ी दर पीढ़ी महंती ने चलना है फिर आपको कभी इनसे फुर्सत भी नहीं मिलेगी । अतः यह बहुत लाभकारी साबित होगी यही आप को हर जोखिम से सावधान भी करेगी वरना फिसलने का पूरा डर है । बस एक ही ख्याल रखना है अपनी इज्जत, आबरू, जमीर इत्यादि कुछ भी इनके माथे की लकीर के आगे तुच्छ ही समझना है शेष ईश जी रक्षा करेंगे आपकी, यही केवल उपाय है इनसे बचने का !

अब देखें जहां गुरू हरगोबिंद जी के खून का प्यासा उनके पिता का भाई अर्थात ताऊ था (और जो चल रहे हैं सो अलग) वहीं अपने ही घर में पोता बाबा धीरमल और आ गये । दुश्मन 60 हजार शाही लश्कर लेकर जिन्दा कैद करने को घेरा डाले हैं और पोता दुश्मनों को बाबा के कैद होने की मुखबरी कर रहा है । युद्ध में पहले मरेगा तो केवल अपना ही पिता बाबा गुरू दिता जी, है ना मजेदार खेल, परमात्मा जी को इन से कम कुछ मजा ही नहीं आता ! और ये सभी महंत (गद्दीधारी) बाबा, दादा इत्यादि लफजों से जाने जाते हैं तथा रूहानी ताकतें भरपूर इनके अधीन ही केवल कार्य करती हैं । इन सभी का मकसद असली महंत के कार्यो में विघ्न ही डालना है । चाहे कत्ल तक क्यों न करना पड़ जाये इन्हें जरा भी शर्म नहीं लगती । इस से कम तो

ये किसी को गिनते ही नहीं । अब दात मिली छोटे भाई गुरू हरि राय जी को वहां भी विरोध बना ही रहा । फिर हरि राय जी ने बाबा राम राय जी को काबिल जान बादशाह औरंगजेब के पास भेजा वहां ये चूक गये "बाणी को बदलने की हिमाकत कर बैठे" गुरू पिता जी ने सदा के लिये ही त्याग दिया । दात छोटे भाई गुरू हरि कृष्ण जी को मिली । यहां अब जब राम राय जी बादशाह से मिल कर छोटे भाई जो केवल पांच वर्ष के लगभग ही हैं के कत्ल का इन्तजाम करवा रहे हैं । अब जब इन्होंने थोड़े समय में ही अपना कार्य समाप्त कर गुरू तेग बहादुर जी को धुर निर्देश अनुसार नियुक्त किया तो कमाल हो गया, सोढी वंश की 22 गद्दियाँ बाबा बकाले चल रही थीं और अधिकारी 20 साल से गुफा बना परमात्मा के ध्यान में लीन है । जब प्रकट हुऐ तो धीरमल जो रिश्ते में भतीजा है कत्ल का बंदोबस्त कर रहा है । उसी के मसंद ने दरबार में गुरू तेग बहादुर जी पर गोली चलाई जो उनकी बाजू को छीलती निकल गई । दास्तान तो बहुत विस्तृत है केवल ईशारे में कही है "थोड़े को बहुत जानना जी ।" "रूहानी ताकतों" द्वारा बनाई गयी इस ईर्ष्या की भयानक आग रूपी महंती को गुरु गोबिंद सिंह जी ने तलवार के जोर पर काट कर (गुरु घर में चले आ रहे इस गलित कुष्ठ रोग को) अलग कर दिया सदा के लिये और "वाणी" शब्द विशेष (रागमई प्रकाशित आवाज) को सदा

के लिये सिख शिष्य के लिये "गुरू" पदवी का दर्जा दे दिया । आने वाली नस्लों के कल्याण के लिये । वाणी का दोहरा अर्थ है इसे आज फिर से याद करने की जरूरत महसूस हो रही है । गुरमुखी के लफजों को ही केवल वाणी समझा जा रहा है । "राम-राम सब कोई कहे ठग-ठाकुर और चोर ।" तारे ध्रुव, प्रहलाद को वाही "नाम" कुछ और । जो निर्देश बाणी में परमात्मा तक पहुँचने के लिये दिये गये हैं उनका तो हमें कल्पना में भी ज्ञान नहीं है । अन्धे-अन्धे के मार्ग-दर्शक बने हुऐ हैं ये बनाई गई सभायें नीचे से ऊपर तक सभी लगभग अन्धे हैं बीत गई घटनाओं को ही दोहराने में गुरू की मर्जी समझी जाती है इस सारे मुद्दे पर विचार के लिये विशाल साधनों की जरूरत है । दाड़ी, शस्त्र इत्यादि विशेष धर्म उस वक्त अति आवश्यक था, आज शस्त्र का विकास केवल बटन दबाने मात्र से ही इस पूरी पृथ्वी को कई बार धुँआ किया जा सकता है । चिता पर सब से पहले रोम ही अग्नि भेंट होते हैं । विचार करना है कि क्या हम शरीर हैं ? नहीं, हम शरीर नहीं आत्मा हैं जिसे कोई भी शस्त्र काट नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती यानी किसी भी उपाय से इसमें कोई भी जमा अथवा घटा नहीं कर सकता । फिर ऐसी "अविनाशी" "आत्मा का कल्याण" ये भौतिक नष्ट हो जाने वाली वस्तुऐं कर ही कैसे सकती हैं ! यानी असल मजमून कुछ और ही है । फिर ये सब

भ्रम कहां से आ रहे हैं ? ये सब मन (हौमें) मास्टर महात्मा जी के अंशो द्वारा फैलाया गया जाल है । "प्राणी तूं आइआ लाहा लैणि । लगा कित कुफकड़े सभ मुकदी चली रैणि । कुदम करे पशु पंखीआ दिसै नाही काल ।" (५-४३) केवल इतना ही भाव है कि जीव प्राण शक्ति इन बाहरमुखी क्रियाओं में ही केवल व्यर्थ गंवा ले और जिस कार्य के लिये उसे यह मनुष्य जामा मिला है उसे शुरू तो क्या करना जान ही न पाये । इसीलिये सारा संसार (तीनों मुल्क) एक रंग तमाशे के रूप में ही केवल प्रकट हैं और जीव इनकी चमक में अपने असली मकसद को ही भूल जाता है । "जो सोता है वो खोता है" पाता केवल वही है जो जागता है । जीव तो माया में ऐसा सो रहा है कि कोड़े मार-2 कर जगाया जाये तब भी जागने को तैयार ही नहीं । "गुड़ मिट्ठा माइया पसरिआ मनमुख लगि माखी पचे पचाई ।" "दिनस चढ़ै फिरि आथवै रैणि सभाई जाई । आंव घटै नर न बूझै निति मूसा लाज टुकाई ।" इन बाहरी चिन्हों का धारण केवल समाज में रहने का केवल एक ढंग मात्र ही है । सभी वेश एक सीमा के बाद बंधन ही साबित होते हैं और हमें तो इन सभी से ऊपर बहुत ऊपर उठना है अपने घर जाना है वो भी जीते जी । आत्मा ही केवल अपने घर जाती है न कि शरीर वेश अथवा साधन । ये सब तो केवल जड़ ही हैं और सीमा के बाद बोझ ही साबित होंगे आत्मा पर । और

जब तक आत्मा पर सूक्ष्म सा भी बोझ है शब्द में समर्था ही नहीं बनेगी आत्मा को खींचने की क्योंकि घर जाने का केवल एक साधन है और वह नंगी आत्मा को ही ले कर के जाता है (25 प्रकृतियां-तीनों शरीर-तीनों गुण-पाँचों अवगुण) ये 36 प्रकार के बोझ जब आत्मा पर से उतरते हैं तभी वह नंगी होती है और उस वक्त उसका कोई लिंग भेद नहीं रहता अर्थात न नर अथवा न मादा के निर्मल स्वरूप प्रकाश की पुंज मात्र। केवल इसी अवस्था में ही यह अपने घर जा सकती है। आप अपने धारण किये हुए चिन्हों को विचारो जिन्हें पकड़े बैठे हो कैसे ये आत्मा को अपने घर जाने देंगे आप खुद ही महसूस करोगे कि सारा जड़ जगत ही आत्मा के लिये केवल और केवल बन्धन मात्र है। आत्मा के जन्म लेते ही ये बन्धन पड़ जाते हैं। फिर बन्धन बदलने से तो कल्याण होने का नहीं फिर इन्हीं में क्या खराबी है अर्थात इनमें रहते हुऐ अपनी जिम्मेदारियों का भुगतान करते इन सभी से ऊपर उठना यहां तक कि इस कब्र (शरीर) को जीते जी लांघ जाना ही मर्दानगी है। हम लोगों का हक मार कर, उनके घर उजाड़ कर ही केवल सूरमा कहला रहे हैं। खालसा कौन है ? "पूर्ण जोत जगै घटि महि तब खालिस तह निखालिस जानै।" "सूरा सो पहचानिये जु लरै दीन के हेति। पुरजा-पुरजा कट मरै कबहूँ न छाडै खेत।" हम अंधकार में डूबे कायर सिर्फ बाहरी निशानों अथवा प्रथाओं

को कपट के ढंग से निभा करके ही स्वंय को जीवन मुक्त समझे बैठे हैं । "आपणा आप न पछाणहि संतहु कूड़ि करहि वडिआई । पाखंडि कीनै जम नहीं छोडै लै जासी पति गवाई । जिन अंतरि सबद आप पछाणहि गति मिति तिन ही पाई ।" अब देखो शब्द तो अन्तर में है और ढूंढते बाहर में है कभी यह खोज पूरी भी होगी अर्थात कभी भी नहीं और जमों की चोटें सहनी ही पड़ेंगी । "जिस जल निधि कारणि तुम जगि आए सो अंम्रित गुर पाही जीउ । छोडहु वेस भेख, चतुराई, दुविधा इहु फल नाही जीउ ।"

गुरू गोबिंद सिंह जी की बक्शी हुई मर्यादा को कोई समझ नहीं सका और बीत गई घटनाओं को इन्हीं गुरूओं के नाम पर दोहरा कर के हमने अपने ही डूबने के लिये एक भयानक दलदल तैयार कर ली है । जहां हम केवल पढ़ने और बाहरी चिन्हों को ही धारण करके मुक्त समझ रहे हैं वहीं एक और "जमात" केवल सुनने और दर्शन में ही मुक्ति समझ रही है । हम मूर्ख बने हुऐ हैं तो ये महामूर्खों की और बन गई है "पड़िअहि (सुनिये) जेते बरस बरस पड़िअहि (सुनिये) जेते मास । पड़िऐ (सुनिये) जेती आरजा पड़िअहि (सुनिये) जेते सास । नानक लेखै इक गल होर हउमै झखणा झाख ।" भाई जी अभी तक तो वो गल बनी ही नहीं और न ही कोई आसार ही नजर आ रहे हैं फिर सिर्फ झख ही मारनी पल्ले पड़ रही है । फिर भी कुछ विचार ही नहीं करते

अर्थात झख मारना ही पसंद करते हैं । रास्ता न पढ़ने में न सुनने में केवल अमल में ही है । और वही हम करना ही नहीं चाहते । शेष सभी स्वादों में तो भाई जी हम अमली के भी बाप कहलाते हैं । सिर्फ और सिर्फ इसी में ही केवल हवा निकल जाती है । "सतिगुरू नो सभ को देखदा जेता जगत संसार । डिठै मुकत न होवई जिचर सबदि न कर वीचार ।" सारी उम्र हो गई सत्संग सुनते, हुजूर-राजे-महाराजे, दाताओं के दर्शन करते आज तक एक दाड़ी का बाल भी प्रकट न हुआ और निश्चय है कि मरते ही हजूर जी आयेंगे और ले जायेंगे क्या मुर्दो का ठेका ले रखा है दाता जी ने । दृष्टि मारते हैं और अन्न विष से अमृत हो जाता है आत्मा मुक्त हो जाती है । भाई जी जहां दाता जी महाराज रहते हैं वहां क्या आँखों पर पट्टी बांध कर रखते हैं और जब संसार में विचरते हैं तो क्या काला मोतिया बिन्द उतर आता है जो सब चीजों को धुंधला कर देता है यानी ये सब मूर्खताओं भरी क्रियाऐं हमने खुद ही अपना रखी हैं । जब स्टेज पर चढ़ते हैं तो यों दीखता है जैसे पेट में वट (मरोड़) पड़ गया है वे घूमने लगते हैं और आकार के सामने वाले लोटने लगते हैं । इन महामूर्खों से भरी जमातों का क्या इलाज है ? यानी कुछ नहीं केवल "जीओ और मरो ।" हम भी इन बड़े-2 रूहानी महाराजों से लेट कर हाथ सिर पर रख कर याचना करते हैं कि एक अमृत भरी दृष्टि इस

विष रूपी संसार पर भी डालो । एक डोले में बैठो इस ढंग से कि कोई न भी देखना चाहे पर दिख ही जाये सुन्दर सुहाना रूप । और उन नरकों में हाहाकार करते प्राणियों को भी अपने डोले को फिरा कर के दर्शन दो ताकी ये सभी जीव (सभी जूनों में) मुक्त हो कर अपने घर जा सुख महसूस करें क्या इन को इनकी हालत पर जरा भी तरस नहीं आता ? भाई साहब जी कहानी कुछ और ही है आप व्यर्थ में ही अपना जीवन नष्ट करते जा रहे हो । एक बार एक यात्री किसी डेरे में बहुत मुश्किल से समय निकाल कर के पहुँचे तो सेवक ने स्वागत किया । फिर यात्री ने कहा कि मैं सचखण्ड जाना चाहता हूँ तो सेवक ने हैरान हो करके कहा भाई आप तो सचखण्ड में ही खड़े हैं ! यात्री उछल पड़ा और हैरान हो गया कि क्या मैं सचमुच सचखण्ड पहुँच गया ? उसे यकीन नहीं आया तब सेवक ने अपनी ही चक्की के और बट्टे पेश किये यानी और सेवकों से कहलवा कर तस्कीद कराया कि आप सचमुच सचखण्ड पहुँच ही गये हैं आखिर । तब कहीं जा कर के यात्री संतुष्ट हुआ और माटी को मुँह, हाथ-पैरों पर मल-2 कर स्नान करता नाचने कूदने लगा । उसे देख सेवक भी बहुत ही प्रसन्न हुए ऐसा निर्मल भक्त कहीं पहले देखा ही न था । अचानक उस की क्रिया में ब्रेक लग गई और वह पूछने लगा भाई जी एक बात और बता दें तो मेरी जिन्दगी का सारा मकसद ही पूरा हो जायेगा । वो

क्या ? कि सुना है सचखण्ड में परमात्मा जी भी रहते हैं कहीं । सेवक कहने लगा कि हाँ रहते तो हैं पर समय से ही प्रगट होते हैं । इतने में ही कुछ शोर सा आता सुनाई दिया । सेवक ने जैसे ही उधर देखा एक दम से दण्डवत हो गया । और यात्री से कहने लगा कि तुम्हारे भाग्य बहुत ऊँचे हैं भाई, मुँह से मुबारक नाम निकला और परमात्मा जी के दर्शन हो गये । यात्री हैरान हो कर के चारों ओर देखने लगा । कहने लगा भाई कहाँ है परमात्मा जी मुझे तो कहीं भी दर्शन नहीं हो रहे । तो सेवक ने कहा ये जो दाड़ी वाले चोला डाले चले आ रहे हैं क्या तुम्हें नहीं दीखते । तो ये हैं परमात्मा जी ओहो मेरे कितने ऊँचे भाग्य हैं मैं तो नुकसान की चिन्ता कर रहा था लेकिन यहाँ आ कर के पता चला कि कितना लाभ मुझे एक दिन में केवल कुछ मिनटों में ही हो गया । उसे इतनी खुशी हुई कि उसके दिमाग में ही हेर-फेर हो गई । भाई बड़े दुख से बताना पड़ रहा है कि शेष जिन्दगी बेचारे उस भाग्यशाली यात्री की शरीर रूपी जेल में कटी और उसके बाद मास्टर महात्मा जी ने उसे किन जेलों में घुमाया भाई जी सच कहता हूँ कि इसका मुझे कुछ ज्ञान नहीं और न ही उसकी मनुष्य जून में आने की कुछ खबर ही मिली है । ऐसा सचखण्ड जहाँ सिर्फ आत्मा ही नग्न रूप में प्रवेश कर पाती है और परमात्मा जो अलख-अगम-अगोचर (कोटन मै कोऊ भजनु राम को पावै) हैं

। की जगह जहाँ कुत्ते बिल्ले जैसी निकृष्ट न जाने कितनी जूनें धड़ल्ले से बिना पास के भ्रमण करती हैं । ऐसा कमाल का सचखंड और इन्ही दीदों (आँखों) से परमात्मा जी का प्रत्यक्ष अनुभव और फिर शेष जीवन मास्टर महात्मा जी के हवाले । भई कमाल है आपकी इस चमत्कारिक खोज का आप को कोटि-2 दण्डवत जो आप ने एक रुहानी भेद प्रकट कर दिया संसार में परमार्थियों को केवल भटकाने के ही वास्ते । भई जय हो धन हैं ऐसे महापुरूषों की, किन शब्दों से आप की महिमा को ब्यान करें यानी कर ही नहीं सकते ।

"रूप न रेख न रंग किछ त्रिह गुण ते प्रभ भिन्न । तिसह बुझाऐ नानका जिस होवै सुप्रसन्न ।"

इन सभी हालातों से स्पष्ट है कि जड़ तथा (जड़-चेतन) महंतो दोनों से ही बचना आवश्यक है आत्मिक कल्याण के वास्ते । इसी मकसद को पूरा करने के लिये गुरू गोबिंद सिंह जी ने दोनों से बचाया था । जड़ तथा महंती पूजा दोनों ही चल रहे समय में केवल बन्धनकारी साबित हो रही हैं । गुरू नानक जी की फिलासफी ही केवल विचार अर्थात धारण करने योग्य है । "पवन आरम्भ सतिगुरू मति वेला । सबद गुरू सुरत धुन चेला । अकथ कथा ले रहउ निराला । नानक जुग-2 गुर गोपाला । एक सबद जित कथा बिचारी । गुरमुखि हउमै अगनि निवारी ।" शब्द

ही सभी भूतों का भूत अर्थात गूरू है उसी की शरण मे जाने में कोई जोखिम नहीं । पर मर्यादा अर्थात रहतनामें का चरितार्थ स्वरूप हो करके ही केवल इस किले को फतेह किया जा सकता है और यही केवल अपना कहलाने के काबिल अर्थात समर्थ है शेष सभी महंतो सहित केवल इसी की खाक से ही रोशन हैं । एक वही "अजूनी-सैभंग" शेष सभी स्वंय से न हो कर उस से तथा जूनों में है । जो गर्भ में आ गया वो कल्पना में भी ईश होने का दावा नहीं कर सकता । ये सभी उस "एक" की गद्दी पर हक जमाये बैठे हैं, समय आयेगा ये सभी झाड़ू से एक तरफ कर दिये जायेंगे और ये कार्य अकाल पुरख परमात्मा स्वंय ही करेंगे । ये सब गद्दार हैं उससे नाम की ताकत ले करके अपना ध्यान अपनी पूजा उसके नाम की आड़ में करवा रहे हैं । "लोक पतीणे कछू न होवै नाही राम इआणा" अर्थात इन की चलेगी नहीं शर्मिंदा होना ही पड़ेगा और ये कार्य शुरू हो चुका है "गुरू (शब्द) मेरे साथ (संग) सदा है नाले । सिमर-2 तिस सदा समाले ।" जड़ चेतन का आधार केवल और केवल शब्द ही है वही आत्मा का सच्चा और पूर्ण समर्थ स्वामी है । दीन हीन हो उसी की शरण में रहना ही केवल सच्ची और आत्मा के लिये कल्याणकारी परमार्थ है ।